महाभारत की लोक कथाएँः 'मित्रता में दरार'

शान्ति पर्व

॥ विश्वजीत 'सपन' ॥

बहुत पुरानी बात है। भारत देश में पुरि नामक एक नगर था। वहाँ का राजा पौरिक था। उस नगर में धन एवं वैभव तो प्रचुर मात्रा में थे, किन्तु वहाँ की प्रजा सुखी नहीं थी। पौरिक बहुत ही क्रूर और नीच प्रकृति का राजा था। प्रजा को कष्ट देने में उसे आनंद आता था। वह कभी किसी से खुश नहीं होता था। तरह-तरह के उपायों से प्रजा को प्रताड़ित करता था और अपना खजाना भरता रहता था। प्रजा उससे भयभीत रहा करती थी और उसकी मृत्यु की कामना किया करती थी। कुछ समय बाद आयु पूर्ण होने पर उस राजा का निधन हुआ। पूर्वजन्म के बुरे कर्मों के कारण उसका जन्म उसी नगर में एक सियार के रूप में हुआ। आश्चर्य की बात यह थी कि उसे अपने पूर्वजन्म का स्मरण रहा।

अपनी यह गति देखकर वह समझ गया कि उसके बुरे कर्मों के कारण ही उसे सियार के रूप में जन्म लेना पड़ा था। अपने पूर्वजन्म की बातें याद कर वह बहुत दुःखी रहा करता था। बहुत सोच-विचारकर उसने पश्चाताप करने का निश्चय किया। उसने जीवों की हिंसा छोड़ दी, दूसरों के कष्ट को अपना समझने लगा और सभी की सहायता करने के लिये हमेशा तत्पर रहने लगा। उसने सदा सत्य बोलने का व्रत भी ले लिया। अब वह किसी के दिये हुए, छोड़े हुए, फेंके हुए और दान दिये हुए अन्न का भोजन नहीं करता था। पेड़ों से अपने-आप गिरे हुए फलों आदि से अपना पेट भरता था और उसी श्मशान में रहने लगा, जहाँ उसका जन्म हुआ था।

एक सियार का इस प्रकार धर्म का आचरण करना उसके जाति-भाइयों को अच्छा नहीं लगा। वे इसका विरोध करने लगे पर वह सियार अपने निर्णय पर अडिग रहा। इस प्रकार उसके इस आचरण की चर्चा चारों दिशाओं में फैलने लगी। वहीं पास के जंगल में एक व्याघ्र रहता था। उसने भी उस सियार के बारे में सुना। उसकी बुद्धि और उसके आचरण के बारे में जानकर विचार किया कि यदि वह सियार उसका मंत्री बन जाय, तो उसकी बहुत-सी चिंताएँ दूर हो जायेंगी। एक दिन वह अपने दल-बल के साथ उस सियार के पास आया और बोला-'भाई सियार, मैंने सुना है कि तुम सत्यवादी और अहिंसावादी हो। तुम मेरे मंत्री बन जाओ।'

सियार ने कहा-'आपने जो मुझे सम्मान दिया, उसके लिये आभार, किन्तु मुझे इसकी लालसा नहीं है।'

व्याघ्र बोला-'देखो, धर्म का आचरण करना उचित है, किन्तु अपने स्वभाव से दूर रहना संभव नहीं है। मैं तुम्हारे स्वभाव से परिचित हूँ। अतः तुम मेरे साथ रहो, बहुत सुखी रहोगे।'

सियार बोला-'यह कारण नहीं है, महाराज। सेवा करना तो मेरा धर्म है। असल में आपके पुराने सेवकों के साथ मेरा स्वभाव नहीं मिलेगा। मेरे आपके पास रहने से उन्हें भी कष्ट होगा और मुझे भी। अतः आप मुझे विवश न करें।'

व्याघ्र उसकी बात समझकर बोला-'तुम इसकी चिंता मत करो। मेरे रहते ऐसा कुछ भी नहीं होगा और यदि तुम मेरा मंत्री बनना स्वीकार कर लो तो यह हम दोनों के लिये अच्छा होगा।'

इस प्रकार व्याघ्र के नाना प्रकार से समझाने पर अन्ततः वह सियार मंत्री बनने को तैयार हो गया और कुछ सोचकर बोला-'यदि आप इतना ही आग्रह करते हैं, तो ठीक है, किन्तु मेरी कुछ शर्तें हैं।'

व्याघ्र संतुष्ट होता हुआ बोला-'मुझे तुम्हारी हर शर्त मंजूर है। फिर भी कहो क्या शर्तें हैं तुम्हारी?'

सियार बोला-'मैं मात्र एकान्त में ही आपको परामर्श दूँगा। यदि हित की बात आपके मंत्रियों के विरुद्ध भी हो तो आप उन्हें भी प्राणदण्ड देंगे। आप हमेशा मेरे आत्मीयों का सम्मान करेंगे और उन पर कभी भी प्रहार नहीं करेंगे।'

व्याघ्र ने सियार की सब शर्तें स्वीकार कर लीं और सियार उसका प्रमुख मंत्री बन गया। कुछ ही दिनों में उसने अपनी बुद्धि और अच्छे आचरण से व्याघ्र का दिल जीत लिया। व्याघ्र उसकी सब बातों को मानने लगा। यह देखकर उसके पूर्व के मंत्रियों को जलन होने लगी। पहले वे मनमानी करते और प्रजा पर अत्याचार करते थे। किन्तु सियार ने उन पर कठोर प्रतिबन्ध लगा दिये, जिससे उनके प्रभाव में तो कमी आई ही, साथ ही उनकी सुख-सुविधाओं पर भी असर पडने लगा। उन्होंने आपस में मिलकर एक योजना बनाई, जिससे सियार को नीचा दिखाया जा सके और व्याघ्र को विवश होकर उसे मंत्रीपद से हटाना पड़े।

एक दिन उन मंत्रियों ने अपनी योजना के अनुसार चुपके से व्याघ्र के लिये रखे भोजन को उठाकर सियार की माँद में रख दिया। जब व्याघ्र भोजन करने आया तो उसे भोजन नहीं मिला। उस दिन उसे बहुत भूख लगी थी। वह क्रोध से पागल होने लगा। सभी पर गरजने लगा। तब इस अवसर का लाभ उठाकर उसके पूर्व के मंत्रियों में से एक ने आकर उससे कहा-'क्षमा करें महाराज! आपसे आचरण की बातें करने वाला वह सियार बहुत बड़ा ढोंगी है। हमने अपने गुप्तचरों को भेजकर पता लगवाया तो मुझे भी आश्चर्य हुआ कि वह ढोंगी सियार आपके भोजन पर भी दृष्टि गड़ाये रखता था और आज तो वह उसे अपनी माँद तक लेकर चला गया।' व्याघ्र ने सुना तो उसे विश्वास नहीं हुआ। उसने अपने गुप्तचरों को भेजकर पता लगाया तो बात सच निकली। यह देखकर वह अत्यधिक क्रोधित हो गया। उसने सियार से बिना कुछ पूछे ही उसको मृत्युदण्ड देने का एलान कर दिया। व्याघ्र के पूर्वमंत्रियों में खुशी की लहर दौड़ गयी। वे अपनी कुटिलता पर फूले नहीं समा रहे थे। उधर सियार को यह बात पता चली तो बहुत दुःखी हुआ। उसे मरने का उतना दुःख नहीं था, जितना इस गलती के एहसास का कि यह जानकर भी कि व्याघ्र और सियार में दोस्ती नहीं निभती उसने व्याघ्र का कहा मानकर उसका मंत्री बनना स्वीकार किया। किन्तु उसने हिम्मत नहीं हारी और वह इस षड्यन्त्र का पता लगाने लगा। वह चाहता था कि चाहे राजा उसे मृत्युदण्ड दे दें, किन्तु उसे सच का पता अवश्य होना चाहिए।

इसी मध्य यह समाचार व्याघ्र की माताजी को भी पता चली। वह बहुत ही दयावान् और सुलझी हुई थी। उसे इस घटना में षड्यन्त्र की बू आ रही थी। उसने व्याघ्र को बुलाकर समझाया-'बेटे! इतनी शीघ्रता में निर्णय मत करो। वह सियार अपना सब-कुछ छोड़कर तुम्हारे कहने पर तुम्हारे पास आया। फिर उसके आचरण से कभी ऐसा नहीं लगा कि वह लोभ करने वाला है। तुम्हारे ये मंत्री उससे जलते हैं। अतः इस घटना से आशंका तो होती ही है। फिर किसी ने तुम्हारा भोजन ले जाते समय उसे देखा भी नहीं है।' व्याघ्र ने भूख से व्याकुल होने के कारण ही शीघ्रता में निर्णय लिया था। अब अपनी माताजी की बात सुनकर सोच में पड़ गया। उसने अपने गुप्तचरों को इस घटना की सच्चाई का पता लगाने भेजा। कुछ ही समय बाद उसके गुप्तचरों ने आकर इस योजना का भाँडा फोड़ दिया। व्याघ्र को अपनी गलती का एहसास हुआ और उसने सियार से क्षमा माँगी। किन्तु सियार तब तक बहुत दुःखी हो चुका था। उसने व्याघ्र से कहा-'अब मेरा यहाँ रहना उचित नहीं है। मित्रता में एक बार दरार आ जाये तो उसके टूटने के आसार हमेशा बने रहते हैं। फिर इस प्रकार लज्जित होने पर किसी को भी उस स्थान पर नहीं रहना चाहिए। अतः अब मुझे आज्ञा दीजिए, ताकि मैं किसी वन में जाकर तप कर सकूं।' व्याघ्र के बहुत समझाने पर भी सियार नहीं माना। अपने कहे अनुसार वह एक निर्जन वन में हमेशा के लिये चला गया।

वृद्धि अच्छी है तो वृद्ध क्यों नहीं?

॥ हृदयनारायण दीक्षित ॥

ब्रह्म संपूर्णता है, व्यक्तिपरक सत्ता नहीं। ईश्वर का पर्याय नहीं। ईश्वर आस्था है और ब्रह्म वास्तविकता। संस्कृत में ब्रह्म का अर्थ 'सतत् विस्तारमान संपूर्णता है। यह संपूर्णता प्रत्यक्ष है। इस संपूर्णता में लगातार वृद्धि होती रहती है। हम ब्रह्म का भाग हैं। अविभाज्य और अखण्ड अंग। सो हम सबके जीवन में भी वृद्धिशीलता का यह गुण धर्म घटता रहता है प्रतिपल। उगना, खिलना, पकना, महकना ब्रह्म के भीतर ही घटता है। जन्म उगना है। खिलना और खिलखिलाना बचपना है। ऊर्जा का अतिरेक तरूणाई है। सारा खेल वृद्धिशीलता का। वृद्धि जारी रहती है। वृद्धि का चरम है वृद्ध होना। समय की नाप में हम इसे वयोवृद्ध कहते हैं। वयोवृद्ध का अर्थ है। उम्र के कारण हुई वृद्धि। समय पर ध्यान न दें तो भी वृद्धि अपना काम करती ही है। हम जन्म के दिन से ही बढ़ने लगते हैं। हम इसे रोक नहीं सकते। वृद्धि रोकने की इच्छा भी मूर्खता है। कौन अपनी वृद्धि नहीं चाहेगा लेकिन वृद्धि के चरम से सब डरते हैं। वृद्ध होना कोई भी नहीं चाहता। आश्चर्य है कि हम सब अपनी वृद्धि तो चाहते हैं, लेकिन वृद्ध होने से डरते हैं।

शिशु होना सौन्दर्यपरक है लेकिन स्वयं को इस सौन्दर्य का अनुभव नहीं होता। संभव है कि शिशु को भी अपने सुन्दर होने का मजा आता हो लेकिन स्मृति इसे संजो नहीं पाती। शिशु वृद्धि पाता है। वृद्धि स्वाभाविक ही आनंदकारी है। बचपन का बोध सिद्ध संन्यासी से भी बड़ा होता है। जीवन खेल होता है तब। वृद्ध का अगला चरण अतिरिक्त ऊर्जा से अरूण और उम्र से तरूण होना है। तरूणाई का अपना सौन्दर्य है। सौन्दर्य का आकर्षण भी बढ़ता है। संसार घेरता है। कामनाएं ठाढ मारती हैं। स्वप्न बढ़ते हैं और घेरते भी हैं। सोते हुए देखे गए स्वप्नों की तुलना में जागते हुए देखे गए स्वप्न ज्यादा दंश देते हैं। वृद्धि का गुण धर्म अपना काम करता रहता है। अनुभव बढ़ते हैं। संसार की समझ बढ़ती है। बुद्धि बढ़ती है। सतर्क न रहें तो बुद्धि में एकत्रित तथ्य चतुराई की ओर ले जाते हैं। बुद्धि का लोकमंगलकारी निष्कर्ष विवेक बनता है और निजी दुरूपयोग चतुराई। सुजान चतुर हो जाते हैं। वृद्धि जारी रहती है। वृद्धि स्वाभाविक अभिलाषा है। हम बढ़ती को नहीं रोक सकते हैं। यह संपूर्णता का गुणधर्म है ही। तरूणाई का विकास होता है। हम अपने स्वप्नों को यथार्थ बनाने के लिए जुटे रहते हैं। सहस्त्रों अभिलाषाएं और सहस्त्रों योजनाएं। जीवन का सौन्दर्य संघर्ष बन जाता है। ऐसे लोग जीवन को संघर्ष बताते हैं। वस्तुतः जीवन संघर्ष नहीं होता। ब्रह्म की हरेक इकाई में वृद्धि होती ही रहती है। संसार देखने की सबकी अपनी दृष्टि है। कुछ लोगों को यह संसार युद्धभूमि प्रतीत होता है तो कुछ लोगों को आनंद प्राप्ति का क्षेत्र, लेकिन आनंद संघर्ष का परिणाम नहीं होता। हम संघर्ष के रास्ते आनंद खोजते हैं और आनंद नहीं मिलता। वृद्धि अपना काम करती है। हम वृद्ध हो जाते हैं। वृद्ध होना परम सौभाग्य है। बचपन का अपना मजा है। जवानी का अपना सौन्दर्य है। वृद्धावस्था के सौन्दर्य का क्या कहना? कच्चे फल में रस, रूप और गंध का अभाव होता है। जवानी ऐसी ही होती है। पके फल का रूप सौन्दर्य आकर्षक होता है। वह रसपूर्ण होता है। सुगंधित भी होता है।

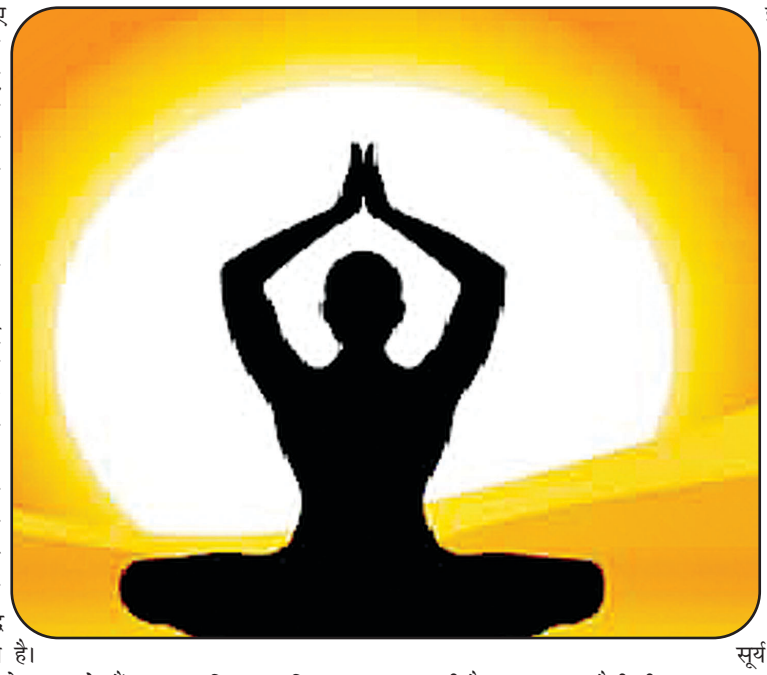

ऋग्वेद के एक प्रेमपूर्ण मंत्र में वशिष्ठ ने त्रयंबक रूद्र में कहा है कि हम त्रयम्बक की आराधना करते हैं। वे सुगंधि पुष्टवर्द्धनम् हैं। वे हमे पके फल की तरह मृत्युबंधन से मुक्त करें। वृद्ध होना पका फल होना है। रसपूर्ण, परिपक्व और समग्र परिपूर्ण, लेकिन हम इससे बचना चाहते हैं। हमें सारी वृद्धियां स्वीकार हैं लेकिन वृद्धि का परिणाम 'वृद्ध होना' स्वीकार नहीं। हम औषधियां खोजते हैं। बाल काला करने के रसायन का प्रयोग करते हैं। हम वृद्ध होने के स्वाभाविक परिणाम को छुपाना चाहते हैं। उषाकाल के सूर्य को उगते हुए ध्यान से देखना चाहिए। वैदिक ऋषियों ने अपने गीतों में इसका स्तवन नीराजन उपासन किया है। संध्या काल का सूर्य भी ऐसा ही होता है। वैसी ही आभा, प्रभा, दीप्ति और अनुकम्पा लेकर वह हमारे ऊपर अनुग्रह की वर्षा करता है। इसीलिए संध्योपासन की महत्ता है। दोपहर का सूर्य आराध्य नहीं होता। सो क्यों? तब उसकी किरणें तीखी होती हैं। मेरे लेखे सूर्य हमारे संरक्षक हैं। हम पृथ्वी पर हैं। पृथ्वी हमारी माता है। माता उन सूर्य देव की परिक्रमा करती है। सूर्य का प्रकाश हमारे जीवन का आधार है लेकिन दोपहरी उनकी तरूणाई है। हम भारतवासियों का सौन्दर्यबोध गहरा है। हम शिशु में गहरा सौन्दर्य देखते हैं और वृद्धि में गहरे के साथ आकाश जैसा चरम सौन्दर्य। प्रातः के सूर्य आराध्य है और संध्या के सूर्य भी। हम अपने पूर्वजों के कल्पित चित्र बनाते हैं। वैदिक काल के ऋषि कवि विश्वामित्र, वशिष्ठ या वामदेव को हम वृद्धावस्था के चित्रों में ही देखना चाहते हैं। कालिदास जैसा रसपूर्ण काव्य सृजन दुनिया के किसी कवि में नहीं मिलता। तरूणाई का वैसा काव्य चित्रण भी अन्यत्र नहीं, लेकिन हम कालिदास की वृद्धावस्था का ही चित्र बनाते हैं। इसलिए कि अनुभव और अनुभूति की गहराई में जाने के लिए वृद्धि का वृद्ध तल जरूरी है।

वृद्ध का सौन्दर्य अनूठा है। कविता तरूणाई है। गीत गायन अनुभूति की परिपक्वता है लेकिन काव्य और गीत का मंत्र हो जाना कविता का चरम है। महाभारत के कृष्ण वृद्ध होकर ही गीता बोलते हैं। भीष्म दुनिया का सारा ज्ञान वृद्ध होकर ही उड़ेलते हैं। जवानी में तो वे अपने भाइयों के लिए कन्या अपहरण जैसा काम करते हैं। प्राचीन काल की सभा समितियों में वृद्धों की आदरणीय भूमिका रही है। आधुनिक काल में गांधी वृद्ध होकर राष्ट्रपिता हो जाते हैं और जय प्रकाश नारायण लोकनायक। तरूणाई प्रेय है और वृद्ध होना श्रेय। प्रेय की अपनी भूमिका है और श्रेय की अपनी। तरूणाई वृद्धावस्था के आनंद की तैयारी का प्रेमपूर्ण अवसर होती है। आज के तरूण भविष्य के अनुभवी वृद्ध हैं। आज के वृद्ध भूतपूर्व तरूण हैं। भारतीय संस्कृति में भूतपूर्व का आदर रहा है लेकिन आयातित सभ्यता में वृद्धों को सम्मान नहीं मिलता। यह बहुत दुखद अवसर है।